राजनीति और समय की मांग

भारत में प्रजातंत्र तेजी से विकसित होने की प्रक्रिया में है। यह अभी तक परिपक्व नहीं हुआ है। यह उन तत्वों द्वारा घिरा हुआ है, जो इसकी स्थिरता के लिए असंगत हैं। प्रजातांत्रिक मूल्यों को जानने की पहली सीढ़ी, एक निष्पक्ष चुनाव प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया कई बार शक्ति की उस संस्कृति को उछाल फेंकती है, जिनसे संवैधानिक मूल्यों के मिटने का खतरा उत्पन्न होने का भय होता है।

किसी राजनैतिक दल को पूर्ण बहुमत मिलना, प्रजातांत्रिक मूल्यों के लिए विनाशकारी हो सकता है। हमारी प्रवृत्ति सामंतवादी है, और हम बहुत जल्दी किसी के आश्रय के जाल में फंस जाते हैं। समाज की वर्गीकृत संरचना से इस विचार को बल मिलता है। सदियों से हम ब्राह्मणों के प्रभुत्व के विरूद्ध दलितों और वंचितों का उत्थान करने में असमर्थ रहे हैं। पूर्ण बहुमत शोषण की इस संस्कृति को बढ़ावा देता है।

यह प्रभुत्व संरक्षण के माध्यम से एक दमनकारी नौकरशाही संस्कृति भी चाहता है। स्वतंत्रता के पश्चात् की भारतीय प्रशासनिक सेवाओं पर राजनीतिज्ञों का कोई दबाव नहीं हुआ करता था। शिक्षा के विस्तार और जाति आधारित समुदायों के भीतर बढ़ती आकांक्षाओं के साथ, नौकरशाही की प्रकृति जाति आधारित समूहों के राजनीतिक सशक्तिकरण के साथ बदल रही थी। मंडल कमीशन की रिपोर्ट के बाद तो इस प्रकार का दबाव और बढ़ता गया। अब ऐसा होने लगा कि एक विशेष जाति और समुदाय से संबंधित नौकरशाही के लोग अपने हितों को पूरा करने के लिए राजनीतिक संरक्षण पर निर्भर रहने लगे। इस समय ऐसे समूहों के राजनीतिक लाभ को भुनाने के लिए राजनैतिक संरक्षण के अधीन संरक्षण दिया गया। मायावती ने दलितों का दामन थामा, तो वहीं समाजवादी पार्टी ने यादवों का। वर्तमान उत्तरप्रदेश में चुनावी लाभ के लिए इस बार हिन्दुत्व एजेंडा चला, और नौकरशाही से अपेक्षा है कि वह राजनीतिक दल के इस उद्देश्य को पूरा करने में आज्ञाकारिता निभाए। नौकरशाही में चाटुकारिता करने वालों को ही वरदहस्त प्राप्त होता है। इसलिए ये नौकरशाह आगे बढ़कर आज्ञाकारी बनने का प्रयत्न करते हुए सरकार की इच्छा पूरी करते हैं; चाहे इस प्रक्रिया में संवैधानिक मूल्यों

की धज्जियां उड़ जाएं। यही कारण है कि पूर्ण बहुमत का प्रभुत्व संवैधानिक मूल्यों को कमजोर कर देता है। दीर्घावधि में, उदारवादी संवैधानिक मूल्यों को राजनीतिक लाभ पर बलि चढ़ा दिया जाता है।

पिछले 70 वर्षों में, राजनीतिक संरचनाओं ने अत्यधिक जटिल सामाजिक संरचनाओं की जरूरतों के प्रति उत्तरदायित्व का परिचय दिया है। पिछड़ी जातियों की क्रीमीलेयर अपनी ही जाति के पिछड़े लोगों की कोई फिक्र नहीं करती। दलितों में भी यही चलन है। ब्राह्मण तो शुरू से ही पिछड़ी जातियों और दलितों के विरोधी रहे हैं, क्योंकि वे हमेशा यह मानते रहे कि योग्यता ही समानता का पैमाना है। इसी कारण से आरक्षण पर वाद-विवाद चलता रहा है। पूर्ण प्रभुत्व वाला राजनीतिक ढांचा, राजनीतिक लाभ के लिए आरक्षण की तरफदारी करता रह सकता है, परन्तु पसंद उसी व्यवस्था को करता है, जिसमें अपनी योग्यता के आधार पर प्रबल वर्ग को शैक्षणिक संस्थाओं और नौकरियों में स्थान मिलता है।

हमारे संवैधानिक मूल्य ऐसी बहुसंख्यक सरकार के अधीन धुंधले पड़ते जा रहे हैं, जो अपने उद्देश्यों को सफल करने के लिए संस्थाओं को दबाती जा रही है। इस जटिल आर्थिक-सामाजिक संरचना में, नीतियों का ऐसा कोई नुस्खा नहीं है, जो समाज के सभी वर्गों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। एक स्वास्थ्य नीति तक में तो इतना दम नहीं हो पाता कि वह जटिल स्वास्थ्य सेवा की जरूरतों को पूरा सके। शिक्षा क्षेत्र में भी यही हाल है। इसका थोड़ा बहुत कारण तो बुनियादी ढांचे और मानव संसाधन की कमी से जुड़ा हुआ है। पूर्ण बहुमत प्राप्त राजनीतिक वर्ग केवल उन्हीं की जरूरतें पूरी करता है, जो उसके राजनैतिक हितों को बढ़ावा देने में मदद करें।

हिन्दू संस्कृति से प्रेरित हिन्दू प्रभुत्व के पास तो हमारे जटिल सामाजिक ढांचे को काबू में करने के सभी राजनैतिक साधन हो सकते हैं। संस्थाएं भी इस बहुसंख्यक मानसिकता के प्रति समर्पित ही होंगी।

अतः राजनीतिक शक्ति में पूर्ण बहुमत को जमींदारी से जोड़ना गलत नहीं कहा जा सकता है। यह आज्ञाकारिता चाहती है, और अपना विरोध करने वाले को कुचल देती है। इसके प्रतिनिधि जमींदारी की तरह उद्योग और व्यापार में अपना हिस्सा चाहते हैं। संरक्षण का आधार सिर्फ राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति होता है।

एक राष्ट्र के रूप में भारत एक गठबंधन है। यह मूल्यों और हितों की साझेदारी का गठबंधन है। प्रतिस्पर्धा के बावजूद सबको इनकी पूर्ति की जाती है। यह अलग-अलग सांस्कृतिक मूल्यों के साथ विभिन्न मानसिकता रखने वाले लोगों का गठबंधन है। यह ऐसा गठबंधन है, जिसमें भिन्न भाषाएं, भिन्न संस्कृति का परिचय देती हैं, फिर भी हम सबकी पहचान एक भारतीय के रूप में ही है। यह एक ऐसा गठबंधन है, जिसके राजनीतिक ढांचे को भारत के विकास का आधार बनाने और प्रजातंत्र की रक्षा के लिए प्रतिनिधित्व आधारित होना ही चाहिए।

ऐसा लगता है कि गठबंधन की राजनीति में अलग-अलग समूहों की बात अधिक सुनी जाती है। ऐसे ढांचे में नीतियां विकसित होती हैं, और यह विविध आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। हम सबको संरक्षणवादी मानसिकता के बजाय एक ऐसे तंत्र के लिए विकसित होना चाहिए, जो सहिष्णु और समावेशी हो। गठबंधन की राजनीति ही संवैधानिक मूल्यों की रक्षा कर सकती है। यही वह तंत्र है, जो कट्टरता को दूर रख सकता है। अलग-अलग मानसिकता का गठबंधन और राजनीति का संयोग उत्तम होता है। इस प्रकार की सरकारों ने पहले भी देश को अच्छी तरह से चलाया है।

'द इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित कपिल सिब्बल के लेख पर आधारित। 21 मई, 2019